JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

गढ़रत्न नरेन्द्र नेगी के लोकगीतों में स्त्री विमर्श : एक अनुशीलन

डा0 डी0 सी0 पाण्डेय
सहायक आचार्य हिन्दी, राजकीय महाविद्यालय हल्द्वानी शहर
किशनपुर गौलापार (नैनीताल) उत्तराखण्ड़–263139
सचल दूरभाष स0 09411319412

सारांशः उत्तराखण्ड के गढ़वाल हिमालय की वसुन्धरा का कण–कण संगीत की सुरलरियों से आकण्ठ निमग्न है। प्रकृति व मनुष्य का सम्बंध यहा एकाकार होता दिखता है। इन लोकगीतों में सभ्यता, संस्कृति एवं इतिहास के साथ नागर संधिकाल के उदाहरण भी देखे–सुने जा सकते हैं। त्याग, समर्पण, बलिदान, श्रद्वा एवं सहानुभूति की प्रतिमूर्ति गढ़वाली नारी, पुरूष की सहभागिनी बनकर कंधे से कंधा मिलाकर कदम–कदम पर स्वदायित्वों का निर्वहन करती चलती है। समकालीन परिदृश्य में अन्य अनेक महत्वपूर्ण बिन्दुओं के साथ स्त्री विमर्श भी चर्चा–परिचर्चा का विषय है। नारीवाद की मान्यताओं, स्थापनाओं से इतर इधर नई दृष्टि से इसे परिभाषित करने का दौर चला है।

उपभोक्तावाद, राजनीतिक तुष्टिकरण, लैंगिक समानता, नारी अधिकारों, विशेषाधिकारों आदि विषयगत् प्रश्नों पर तथाकथित बुद्विजीवी अवसरवादी नारी हितो के पहरेदार हाँका लगाते भी दिखते हैं। सुदूर ग्राम्यांचलों में शोषित, पीढ़ित, कामकाजी महिलाओं की कृषि–पशु सम्बन्धित व्यथा–कथा की दिनचर्या के मध्य अपना दैनिक जीवन किन परिस्थितियों में व्यतीत हो रहा है, इसे हमारे समय के श्रेष्ठ गढ़वाली लोकगायक श्री नरेन्द्र सिंह नेगी जी के गीतों के साथ समझा जा सकता हैं स्त्री विमर्श के नाम पर घड़ियाली आँसू बहाने वालों को आत्मावलोकन की आवश्यकता है कि गढ़वाली नारी का जीवन कितना सहज–जटिल है। नेगी जी के गाये–रचे गये लोकगीतों में इन्हें महसूस किया जा सकता है। उनके गीतो की सुगन्ध सीमाओं से परे हैं। क्या हम इसे आत्मानन्द की सीमा तक सुन–समझ सकते हैं ?

बीज शब्दः गढ़वाल, गढ़वाली, हिमालय, लोकगीत, पलायन, खुदेड., रसराज।

1. आमुखः लीलाधर जगूड़ी जी की कविता की कुछ पंक्तियाँ हैं:–

जब चारों ओर बारूद की गंध छा रही हो
तो उधर चलना जरुरी हो गया, जिधर से
मिट्टी में मिले हूए नगण्य लोगों को छूकर
अब भी, फसलों की गंध आ रही हो।

यह मिट्टी में सने लोग कृषि–पशु की समृद्ध संस्कृत के सिवाय और कहा मिलेंगे भला ? साहित्य का केन्द्र लोकमंगल है जिसका आधार लोकहित की भावना को स्वयं में समाहित किये हुए रहता है। लोक की जड़ों को खाद–पानी का जीवनदायी पोषण भौतिकवाद की चकाचौंध से दूर प्रकृति की गोद में अकृत्रिम जीवन के धनी जनसमुदाय से प्राप्त होता है। प्रकृति का स्नेह, सामीप्य, खग, कुल कलरव, नदियों–झरनों का कल–कल, गिरी कानन की मन्द समीर, नानाविध पुष्पों की मनोरम सुगन्ध, भवरों की गुनगुन, दादुर की टर–टर, कीट–मृग–पतंगो की अद्वितीय धुन, पसीने में नहाया किसान, बरखा में भीगता मजदूर, प्रचण्ड धूप में खेत–खलिहानों में श्रम साधिका मातृशक्ति, वहीं से तो लोक के तराने हमारे कर्ण पल्लवो में अमृतरस का सिंचन करते हैं। उत्तर हिमालय प्रदेश की गढ़ांचल भूमि को काट–काटकर और पुश्ते देकर सीढ़ीनुमा छोटे–बड़े खेत, कहीं दूर दूर तक फैले उत्तंग हिमाच्छादित शिखर श्रृखलाएँ तो कही अथाह समृद्व घाटियाँ पूरे गढ़वाल क्षेत्र के परिचय की झलक मात्र है। उचित ही कहा है कि ये पहाड़ दूर से जितने सुन्दर हैं यहाँ का जीवन उतना ही कठिन है। यहा जीवन यात्रा इतनी आसान नहीं है जितनी लगती व दिखती है। इस जीवन की धुरी है हमारी आधी आबादी का सच अर्थात् महिलाएँ, पहाड़ की कृषि, पशु संस्कृति–परम्परा, बसासत, रिवाज आदि को जीवंत बनाये रखने में यहाँ की मातृशक्ति की विशेष भूमिका है। सृर्जन–पोषण के प्राकृतिक दायित्व के साथ ही वह हमारी संस्कृति की सशक्त वाहक भी है। लोकजीवन के लोकगीतो की भाषा साहित्यिक व शिष्ट न होकर साधारण लोक जन की भाषा होती है। जीवन यात्रा के प्रत्येक पड़ाव में नारी को रिश्तों–नातों की विविध भूमिका की पात्रता कुशलता से अभिनीत करनी होती है। लोकनायक नरेन्द्र नेगी के गीतों में चाहे वह स्वयं उनकी रचना हो या लोक की या अन्य रचनाकार की सहमति से उनके मधुर कंठ ने गढ़वाल की नारी को पृथ्वी के समान क्षमाशील, सूर्य के समान तेजस्वी, समुद्र के समान गम्भीरता, पर्वत के समान उच्चता एवं चन्द्रमा के समान शीतलतामय, व्यक्तित्व के रूप में चित्रित किया है। पहाड़ की नारी के श्रम साध्य जीवन में जब सुख–दुख आशा–निराशा, उमंग–आघात की प्रबल लहर लोकगीत के रूप में उसके अधरों से स्वतः प्रस्फुटित हो उठती है। उसकी देशकाल परिस्थितिजन्य स्वतःस्फूर्त अभिव्यक्ति में सहजता, सरलता, निश्छलता, निष्कपटता की सौंधी सौंधी रौंतिली सुगन्ध प्रवाहमान है चूँकि स्वाभाविकता लोकगीतों का प्राणतत्व है। मन के तारों को झंकृत करती इस लोकगीतात्मक सहज अभिव्यक्ति के मार्ग में दिमागी नूरा कुश्ती नहीं दिखती।

2. मूल शोधालेखः जीवन के खेत में उगते हैं यह सब गीत, कल्पना भी करती है अपना काम, स्मृति भी और भावना भी, नृत्य का हिलोरा भी पर ये सब हैं जब लोकगीत हृदय के खेत में उगते हैं। सुख–दुख की उमंग की जोर से जन्म लेते हैं और दुख के गीत जो रिसते लहू से पनपते हैं और आँसुओं के चिर– साथी बनते हैं फाक सांग्स ऑफ मैनी पीपुल–भाग –2, फलोरेंस वाटरफील्ड। [01] प्राकृतिक सम्पदा से समृद्व गढ़वाल हिमालय की मातृशक्ति अपनी जीवटता, स्नेहवत्सलता, एवं वीरोचित उद्वरणों से परिपूर्ण है। गढ़वाल नामक इस देश का

सम्वत् 1557 और सम्वत् 1572 के बीच अर्थात सन् 1500 ई0 से 1515 ई0 के बीच रखा जाता पाया जाता है। [02] गढ़रत्न लोकगायक नरेन्द्र नेगी के लोकगीतों में नारी विषयक दृष्टिकोण गहन, उदार एवं विशाल रहा है। पितृसत्तात्मक समाज में नारी की महत्ता को उनके लोकगीत रेखांकित करते चलते हैं। नारी संवेदना की पहल नेगी जी के लोकगीतों में सरलता से सुनी समझी जा सकती है। नेगी जी की उत्कृष्ट रचनाधर्मिता उनके साहित्यिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं जनसरोकारों को उनके गीतों में नारी अधिकारों एवं सामाजिक यथार्थता के रूप में पर्वतीय परिवेश परम्परा की परिधि में देखा जा सकता है। नरेन्द्र नेगी के लोकगीतो में भावों की रसात्मक एकात्मानुभूति की अभिव्यक्ति है और इनमें केवल राग है जिनका सम्बध हृदय से है। इन लोकगीतों में हृदय का इतिहास व्याप्त है, प्रेम का आकर्षण है श्रद्वा है तथा करूणा की कोमलता के साथ हृदय का शुद्व प्रतिविम्ब है। इनमें आदर्श व यथार्थ का मणिकांचन संयोग दृष्टिगत होता है, जिनमें कल्पना कम स्वाभाविकता अधिक है।

निःसन्देह पर्वतीय जीवन विषम, जटिल व संघर्षपूर्ण होता है, उस पर भी पर्वतीय नारी के त्याग, साहस, कर्मठता, धैर्य, ममता, दया, प्रेम, सहिष्णुता शील एवं शालीनता के व्यक्तित्व से ओत–प्रोत गढ़ांचल की नारी का इतिहास वीरांगना के साथ ही साथ प्रकृति गीतानुरागी के रूप में रहा है। प्रायः देखा गया है कि पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियों के कार्यो में एकरसता अधिक दिखती है। इसमें कार्य करते हुए स्वयं बनाये गये गीतों में ऊहापोह को स्थान कम मिलता है, इनमें इतिवृत्तात्मकता कम चित्रात्मकता अधिक होती है। रोपाई, गोढ़ाई, घास–कटाई, चारा–बीनना, चक्की में अनाज दलना–पीसना, खेत–खलिहान के कार्य करते समय, ढोर–डंगर चराते, घराट पीसते हुए स्वयं गुनगुनाते चलना, सहकारिता के भावोन्मिलनपूर्ण क्षणों में लोकगीतों में उनका हृदयानुराग शब्दों के माध्यम से अनुभव किया जा सकता है नरेन्द्र नेगी के लोकगीत नारी की आत्मा की अभिव्यक्ति है, इनमें कोरी कल्पना नही वरन, सत्यानुभव हैं नित जीवन के व्यापक आरोहावरोह भरे संघर्षमय क्षणों की निराशामय स्मृतियाँ इनमें पिरोई गई हैं। उनके दर्जनों लोकगीत गढ़भाषियों के अतिरिक्त अन्य लोकगीत प्रेमियों के भी कंठहार बनें हुए हैं, उनमें से स्त्री विमर्श से सम्बन्धित कुछ प्रमुख लोकगीतों को सरलता की दृष्टि से कुछ इस तरह से वर्गीकृत किया जा सकता हैः–

- दैवीय स्वरूप के अध्यात्मपरक लोकगीत।
- ऐतिहासिक चरित्रांकनयुक्त लोकगीत।
- प्राकृतिक सौन्दर्य के रसपूर्ण लोकगीत।
- रसराज श्रृंगार से परिपूर्ण लोकगीत।
- दैनिक जीवन के संघर्ष के लोकगीत।
- सामाजिक जीवन के यथार्थ का चित्रांकन करते लोकगीत।
- वात्सल्य से ओत–प्रोत लोकगीत।
- पलायन के टीस भरे गीत।
- खुदेड़ के लोकगीत।
- बारहमासा लोकगीत।
- हास्य व्यंग्यपरक लोकगीत।
- लोक संस्कृति संरक्षण के लोकगीत।

देवभूमि उत्तराखंण्ड के गढ़ाचल में कंकर–कंकर में शंकर है। देवी–देवताओं, धामों, मन्दिरों, शक्तिपीठों की उपासना की जाती है। लोकगायक नेगी जी ने प्रत्येक क्षेत्र को अपने गायन से स्पर्श किया है। जनसरोकारों की जनभावनाएँ जनवादी लोकगीतों की परिधि से बाहर कैसे रह सकती है भला ? वो भी धर्मसहिष्णु जनमानस का लोकजीवनः–

जय अम्बे अम्बिका भवानी, कष्ट हरिणि वाली माता,
उद्वारिणि तारिणि भक्तों की रखवाली माता
जय अम्बा जगदम्बा जय माता राणी माता राणी,
माँ तेरो श्रृंगार प्यारो, मॉ तेरो रंग रूप न्यारो,
ममता छलकाणी मुखड़ि स्वाणी।

इसी तरह प्रति बारह वर्षों के अन्तराल में आयोजित होने वाली विश्व की सबसे लम्बी धर्मयात्रा मेला श्री नन्दाराजजात में नेगी जी द्वारा राज्य की धर्मप्राण जनमानस की भावनाओं को नारीशक्ति के रूप में स्तुतीगान किया है– जय नन्दा भोला ..... या गंगा जी का देसा हो.....।

गढ़वाल की लक्ष्मीबाई के रूप में प्रसिद्व तीलू रौतेली तथा पतिव्रता नारी रामी बौराणी का उदात्त चरित्रांकन नेगी जी ने किया हैं पन्द्रह वर्ष मात्र की वह वीरांगना जो सात साल तक गढ़वाल राज्य की पूर्वी सीमा पर कत्यूरी सेना से लोहा लेती रही। दूसरी ओर राणी बौराणी जैसी सतवंती नारियॉ यहॉ हुई जो बारह वर्षो तक पति की प्रतिक्षा करती रही । पति द्वारा छद्म जोगी के भेष में परीक्षा लिए जाने पर क्रोधित स्वरूप उसके एतिहासिक श्रेष्ठ चरित्र को प्रदर्शित करता हैः–

गढ़वाली कवि बलदेव प्रसाद शर्मा 'दीन' की पंक्तियों को लोकगायक नेगी जी ने अपना मधुर कंठ से गाया है–

"बाट गोड़ाई क्या तैरो नौ च, बोल बौराणि कख तैरा गौं च,
रौंतु की बेटि छौं, रामि नौं च, सेठू की ब्वारी छऊँ पालि गौं छ।

इसी तरह पतिव्रता रूकमा का चरित्रगान भी किया गया है– 'नेग्यू की रूक्मा तारूणी ताल डूबे।'

नरेन्द्र नेगी के लोकगीतों में नारी जीवन के विभिन्न पहलूओं के लिए जितना विशाल फलक देखने को मिलता है वह अन्य स्थानीय कवियों, गायकों की रचना –गायन में तुलनात्मक रूप में अद्यतन उतना नहीं दिखता। यहॉ स्त्री लोकगीतों द्वारा प्रकृति की सहचरी है वह ताल, झील, झरनों, नदी, पोखरों, चोटियों, घाटियों के साथ उन्मुक्त होकर गाती है। हवा के बहते झौंकों से मतवाली उसकी अन्तर्ध्वनि प्रकृति के विविध उपादानों, ऋतुओं से प्रेमालाप–वार्तावली करती पग–पग पर दिखती है मानवीकरण अलंकार की सुन्दर छटा देखिए कैसे प्रकृति रूपी नायिका के सौन्दर्य को शब्दाभिव्यक्ति दी गई है–

'बाज अयारू का बौंण खिल्यूँ बुरांस कनू
हैरी साड़िमा बिलोज लाल पैरयू हो जनू

मालू ग्वीरालू का बीच खिली सकिनी अहा
गोरी मुखड़िया हो लाल उठूड़ी जनी अहा।' [04]

अनुप्रास, उपमा, रूपक और मानवीकरण अलंकारों की छटा–युक्त उक्त लोकगीत में प्रकृति रूपी नायिका का सौन्दर्यीकरण किया गया है। बसंत रूपी नायिका का महिमामंडन 'के बाटा ऐली कै बाटा जैली' या फिर गंगा को माँ के रूप में चित्रित करना 'गंगा मातअमी माई हर–हर गंगे माँ का दूदै लाज भी नि राखि जाणि गंगा जी', स्त्री के महिमामंडन को प्रमाणित करता है।

रसराज श्रृंगार के दोनों पक्षों संयोग एवं वियोग का नेगी जी ने सांगोपांग चित्रण किया है। विशेषतः वियोग की चारों अवस्थाओं पूर्वराग, मान, प्रवास, एवं करूण रस की छटा उनके लोकगीतों में नारी की भावना को लिए कदम–कदम पर देखते ही बनती है। लोकगायक जिस धरातल सें अपनी रचनाओं व गायन का खाद–पानी प्राप्त करता है उसकी मर्यादाओं, वर्जनाओं, जागृत, चेतना, अधिकार, कर्तव्य, विचार–विमर्श, परम्परा रूढ़ि, धर्म, आस्था, विश्वास, लोकविश्वास रीति–नीति–प्रीति, बंधन, भावना, सम्भावना की परिधि में आपनी जीवन यात्रा की सहपथिक नारी की मनोभूमि के चित्रण में स्वयं को भला कैसे रोक सकता है? लोकगायक नेगी जी के कंठ से यह भाव प्रकट होता रहा है, 'बांद', 'धागुला झॉवर', 'नयु नयु ब्यौ', 'त्यार रूप की झौल मा', 'धरम कू जाती कूं जंदेउ', 'मेला खौलो मा', 'त्वे बिना माछि पाणी सी', 'वा जुन्यालि रात', 'ईच माल टाल', 'मन लागौ', 'मुलु मुलु....', 'नांरंगी की दाणि', 'हे जी कै बै ना कारा', 'तुम्हारी खुद मा', 'न हो कखि', 'श्याली ए बसन्ती श्याली', 'कभी चुल्लु जंगादि', 'हयूद का दिना', 'छट छूटी गाड़ी', 'दोफरा का बटौई', 'लुकौ कख लुकांदी', 'कुछ हौरी छई', आदि आदि अनेक लोकगीत ऐसे हैं जिनमें नेगी जी ने आंचलिक नारी जीवन के विविध भाव भंगिमाओ का सहज गहनता से वर्णन–चित्रण किया है जो उनके स्त्री विमर्श के बहुकोणीय दृष्टिकोण से परिचित होने का लोकप्रिय साधन है। नारी सशक्तीकरण के सन्दर्भ में आक्रमक व निर्णायक नेतृत्वकारी रचना गायन की अभी उनसे प्रतीक्षा है चूँकि साहित्य समाज का दर्पण है, समाज में घटित–फलित परिस्थितियों का चित्रांकन ही लोकगायन के स्वरों में सुना जा सकता है। स्त्री मुक्ति की दृष्टि से वैश्विक स्तर पर जो परिवर्तन दिख रहे हैं, पितृसत्तात्मक समाज की सीमा में चित्रित नारी के जीवन के विविध पहलू गढ़रत्न नेगी जी के लोकगीतों में नये फलेवर के साथ निकट भविष्य में सुनने को मिल सकते हैं।

नारी स्वतंन्त्रता, स्वछन्दता, आत्मनिर्भरता, आर्थिक निर्भरता, बंधन मुक्ति, आदि से सम्बन्धित लोकगीत अभी परिदृश्य में आने शेष हैं। समकालीन समाज में नारी की परम्परागत छवि ही लोकगीतों का विषय रहा है। नेगी जी ने भी अपने लोकगीतों में जिस स्त्री विमर्श को केन्द्र बिन्दु में रखा है वह परिवार की धुरी, श्रृगार रस केन्द्रित, प्रेम–विरह, देवर–भाभी, जीजा–साली, ननद–भावज, देवरानी–जेठानी, सास–बहू, भाई–बहन, बाल विवाह, अनमेल विवाह, पति द्वारा उत्पीड़न, पति–पत्नी व्यंग्यमय चित्रण आदि को स्त्री विमर्श की भावभूमि के सन्दर्भ में देखा जा सकता है जिनमें नारी अधिकारों–सम्मान की धड़कन लोकगीतों के द्वारा सुनी समझी जा सकती है। भाई–बहन के स्नेह सिंचित इन पक्तियों को देखिए जिसमे बहन की लाचारी व मजबूरी परस्पर वॉट–साझा कर हल्के हो रहें हैं दोनों 'भैजी भैजी बल भुली.....।'

स्त्री का स्त्री के प्रति दृष्टिकोण, उसका स्वयं के प्रति दृष्टिकोण, पुरूष प्रधान समाज की स्त्री के प्रति सोच समाज के प्रति की दृष्टि, बेटी, बहन, पत्नी, माँ आदि की दृष्टि सें धर्म संस्कृति, परम्परा, विज्ञान, तर्क के चश्मे से सामाजिक तानों–बानों के मापदण्डों में स्त्री को मिलने वाला न्याय कितना प्रासंगिक व यथास्थितिवादि है इन समस्त बिन्दुओं को नरेन्द्र नेगी के लोकगीतों के शोधात्मक दृष्टि से परखा जा सकता है।

गढ़वाल पर्वतांचल का लोकजीवन प्रायः चुनौतीपूर्ण है, यहाँ ग्रीष्म ऋतु में दावानल, वर्षा ऋतु में भूस्खलन–अतिवृष्टि, शीत ऋतु मे हिमपात के रूप में प्राकृतिक आपदा सदैव दिनचर्या का अंश है। कृषि एवं पशुपालन आदि का जीवन यापन करने वाली विशुद्व ग्रामीण जनमानस जिनमें लोकजीवन के कष्ट अकथनीय हैं उसमें भी पलायन की मार झेल रहे समाज का दैनिक जीवन का संघर्ष यत्र–तत्र विखरा है। 'बेटी ब्वारी पहाडो की', 'ये लोला डांडा मा', 'सदानि यानि दिनो', 'दिल्ली वाला द्यूरा', 'जिदेरी घसेरी', 'दोफरा का बटोई', 'घुट घुटू बाटुलि', 'कभी चुल्लु', 'ना चिटठी...', 'तुम्हारी खुदमा' आदि एसे लोकगीत हैं नेगी जी के। जिनका घोर कष्टमय जीवन शब्दों के वर्णन से परे है बस जिसने उसे भोगा है या जो भोग रहा है वही जानता है उस पीड़ा को जाके पैर फटै न बिवाई सो क्या जाने पीर पराई।

गढ़वाली खुदेड़ गीतों की टीस वेदना गहनतम रूप से मर्मस्पिर्शी है। पर्वतीय श्रमशील धैर्यवान नारी के कष्टप्रद जीवन की झाँकी इन लोकगीतों में नेगी जी के स्वर में सुनी जा सकती हैं। मायके के यादों के झरोंखों में खोई वह उन्मुक्त होकर गिरि काननों के मध्य गा उठती है–

'सौत्येली ब्वे छाई मैतमा भी खैरी खाया
बेट्यूँ का खुदेड़ मैना
सेरा बसग्याल बूणमा....' [05]

इधर राज्य निर्माण के तेईस वर्षों वाद शिक्षा स्वास्थ, सड़क, विद्युत, पेयजल, संचार की आधारभूत सुविधाओं के विस्तार के उपरान्त नारी की दिनचर्या में कुछ सहजता अवश्य आई है किन्तु लोकनायक नेगी जी ने स्त्री विमर्शान्तर्गत नारी के जिस तंगहाली का चित्रांकन अपने लोकगीतों के माध्यम से किया है वह न्यूनाधिक रूप में अब भी दृष्टिगत होता है। लैंगिक भेदभाव रहित एवं स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व की पैरवी करते नेगी जी के लोकगीत गढ़वाली स्त्री की चेतना का वर्णन है।

जीवन के प्रत्येक रस का स्वरांकन अपने लोकगीतों में करने वाले नेगी जी ने हास्य–व्यंग्य या गम्भीर विषयों दोनों को बराबर महत्व दिया है। आंचलिक समाज की विसंगतियों का मनोरंजनात्मक ढ़ग से चित्रांकन कोई नेगी जी से सीखे। उनके लोकगीतों में सम्पूर्ण गढ़वाल ही नहीं शेष पर्वतीय जीवन की झलक गहराई से देखने को मिलती है। नई पीढ़ी द्वारा बुजुर्गों की अनदेखी, अवमानना सामान्य बात है। नेगी जी ने इसे अपने ही अंदाज में प्रस्तुत किया है 'कैमा ना बोल्या भैजी जनानि क....', 'कनु लडीक बिगड़ी म्यारू व्वारी कैरिकी', 'कैमा लगाणी छुई अपणि खैरिकी'। लोक ग्रामों में बसता है और ग्रामीण जीवन की संघर्षमय गाथा का प्रतिविम्ब स्त्री विमर्श के अनेक रूपों में नेगी जी के लोकगीतों में देखने सुनने को मिलता है। सास–बहू के सौहार्द, संघर्ष की छाया में लिखे गाये–गये ये लोकगीत अल्पाधिक रूप में अब भी महसूस किये जा सकते हैं। एक स्त्री द्वारा दूसरी स्त्री के साथ किया जाने वाले व्यवहार को उनके लोकगीतों में सदाबहार स्थान प्रदान करता है।

वात्सल्य रस से परिपूर्ण उनके गाये लोकगीत स्त्री विमर्श को एक भावभूमि पर रखते हैं। 'मेरी बेटुली', 'घुघुती घुरूण लगि', 'आई पंचमी माउ...', आदि लोकगीतों को कैसे विस्मृत किया जा सकता है ? इन गीतों में नारी जीवन के घनघोर भावात्मक पृष्ठभूमि का इतना गहन एवं विशद् चित्रण यथार्थता के साथ हुआ है कि उसमें उस स्थानीय समाज की सांस्कृतिक जीवनेतिहास के दर्शन प्राप्त

होते हैं। चूँकि लोकगीत लोकजीवन का प्रतिविम्ब हैं। स्त्री के हृदय का सर्वोच्च आसन जननी–माँ के रूप में प्रतिष्ठित करते हुए नेगी जी ने करुण रस को रसराज की पदवी से विभूषित किया है।

राज्य गठन के 23 वर्ष व्यतीत होने पर भी पलायन यथावत गम्भीर प्रश्न बना हुआ है नीतिनिर्माताओं एवं भाग्यविधाताओं के सम्मुख। जबकि पलायन आयोग भी कार्यरत है। कोरोना काल के उपरान्त घर वापसी की एक लहर अवश्य आयी किन्तु वह क्षणिक थी। शिक्षाा रोजगार एवं स्वास्थ्य के नाम पर होने वाला पलायन, जनप्रतिनिधियों का विकासखण्ड, तहसील, जनपद, मण्डल एवं राजधानी स्तर पर पलायन, सरकारी, गैर सरकारी, सेवानिवृत्त–कार्यरत सैन्य कार्मिकों द्वारा अपनी जड़ों को छोड़ने का क्रम अनवरत है। नेगी जी अपने लोकगीत 'अपणु सी देखिण च....', में इस बिन्दु को सरलता से उठाते दिखते हैं। पलायन से खाली होते पहाड़ के गाँव, अधिकांश जनसंख्या जो गाँवो में शेष बची है वह महिलाओं की संख्या को स्पष्ट करते हैं किन्तु साढ़े–तीन मैदानी जनपदों में जनसंख्या का विस्तार एक विरोधाभास भरी कहानी कहता है। पलायन के उपरान्त महानगरों की दमघोंटू जलवायु में निवास करती एक पर्वतीय नारी की मनोदशा का चित्रण लोकगायक नरेन्द्र नेगी अपने ही अन्दाज में करते दिखते हैं– 'हे जी सारूयामा फूली...', 'गाणि', 'मैलु घिंघोरा', 'बीज छौ', 'उकाल उंदार', 'बोल्यू माना', ' खांदी बगत'।

ये उच्चि उच्चि डांडी कांठी, ये गैरि गैरि रौंतेली घाटी,
न जा न जा न जावा छोड़ी की, अपड़ि जन्मभूमि माटी
बोल्यूं माना, बोल्यूं माना, बोल्यूं माना.....।

अर्थात् ये ऊँचे वन और पर्वत श्रेणी, ये गहरी–गहरी घाटी मत जाओ छोड़ के। निज जन्मभूमि, निज माटी, मान लो कहना, मान लो कहना, कहना मेरा तुम मान हो पलायन की सबसे अधिक दुष्प्रभावित पर्वतीय ग्राम्यांचल की नारी है निःसन्देह।[06]

3. निष्कर्षः सारांशतया कहा जा सकता है कि गढ़वाल अंचल के जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं है जिन पर गढ़रत्न नेगी जी ने गायन न किया हो, उनकी वाणी पाकर शब्द एवं स्रोता दोनो धन्य हो गये। जीवन की व्यथा–कथा को स्त्री के सन्दर्भ में व्यक्त करते उनके लोकगीत सजीवता एवं सरसता के साथ यथार्थानुभूति कराते चलते हैं। उनके गीत गढ़वाली संस्कृति एवं सभ्यता के अग्रदूत हैं, इनमें जनमन की पुकार है। नागर सभ्यता के रंग में सरोबार नई पीढ़ी को हो सकता है यह काल्पनिक लगे किन्तु पहाड़ के ठोस धरातल का जीवन जीने वाली वहाँ की नारियाँ इस सत्य से आज भी रू–ब–रू हैं। मानवमन की अन्तर्धारा को स्पर्श करने की शक्ति रखने वाले नेगी जी के उक्त महिला के प्रति केन्द्रित गीतों में मानवता की महिमा का गुणगान गुम्फित है।

लोकसाहित्य के अन्तर्गत लोकगीतों का उदगम भी उतना ही पुराना है जितना गढ़वाल अंचल। चूँकि अब लोकगीत लिखे जाने लगे हैं, डिजिटल इण्डिया के दौर में भौतिकवाद की चकाचौंध इन्हें बाजार के आगे मसालेदार चासनी में परोसने को आतुर हैं किन्तु विदित है कि लोकगीत का रचनाकार लोक होता है। कालजयी रचनाकार गायक गढ़गायक नरेन्द्र नेगी जी के कंठ से प्रवाहित सुरसरिता द्वारा गढ़वाल की नारी की आगामी रचनाओं में रूढियों की बेढ़ियों को तोडती स्त्री दृष्टिगत होगी। आधुनिक अर्थों में स्त्री विमर्श को एक नया आयाम निश्चित ही उनके नये कलेवर, स्वर, रगं–ढंग में पाठकों, स्रोताओं के सम्मुख आयेगी अत्याधुनिकता एवं पाश्चात्य संस्कृति के अन्धानुकरण के कृत्रिम परिवेश में पल रही युवा पीढ़ी को प्रौढ़ होने से पहले ही नेगी जी के लोकगीत अपने अतीत व जड़ों की गहनता से अनुभूति कराने में सक्षम है। अभावों में प्रभावकारी गायन के लोकगायक श्री नरेन्द्र सिंह नेगी जी को दीर्घायु एवं आरोग्यमय यश्स्वी जीवन की शुभकामनाएँ।

4. सन्दर्भ सूची–

[1] काला जनार्दन प्रसाद गढ़वाली भाषा और उसका लोकसाहित्य गढ़वाली लोकगीतों का मूल्यांकन, समय साक्ष्य देहरादून पृ0स0 333।

[2] रतूड़ी हरिकृष्ण, गढ़वाल का इतिहास, भौगोलिक वृतान्त, प्रथम अध्याय स0, कठोच यशवन्त सिंह, भागीरथी प्रकाशन गृह टिहरी गढ़, उत्तराखण्ड़ पृ0 स0 01–02।

[3] सुन्दरियाल दीनदयाल 'शैलज', अनुवाद नरेन्द्र गीतिका जो जस देई खण्ड़ (क) हिमालय लोक साहित्य एवं संस्कृति विभाग ट्रस्ट रायपुर देहरादून उत्तराखण्ड़ पृ0 स0 14–15।

[4] नेगी नरेन्द्र सिह, गाण्यूँ की गंगा स्याण्यूँ का समोदर, बिनसर पब्लिसिंग क0 पृ0 स0 41।

[5] रावत, हटवाल, गणी, स0 नरेन्द्र सिंह नेगी के गीतों में जनसरोकार, प्रौढ़ सतत् शिक्षा एवं प्रसार विभाग, यूनीगढ़, श्रीनगर, विनसर पब्लिसिंग देहरादून उत्तराखण्ड़ पृ0 स0 154।

[6] सुन्दरियाल दीनदयाल 'शैलज', अनुवाद नरेन्द्र गीतिका जो जस देई खण्ड़ (क) हिमालय लोक साहित्य एवं संस्कृति विभाग ट्रस्ट रायपुर देहरादून उत्तराखण्ड़ पृ0 स0 68–69।